24. द्रष्टव्यः डॉ0 नगेन्द्र, ''काव्य बिम्ब'', पृ0 17।
25. द्रष्टव्य : डॉ0 केदारनाथ सिंह, ''आधुनिक हिन्दी–कविता में बिम्ब–विधान'', पृ0 247
26. द्रष्टव्य : डॉ0 सुशीला शर्मा, ''तुलसी–साहित्य में बिम्ब–योजना'' पृ0 316, कोणार्क प्रकाशन, दिल्ली, सन् 1972 ई0।
27. द्रष्टव्यः डॉ0 सुलेख शर्मा, ''काव्य–शिल्प के आयाम'', आदर्श साहित्य प्रकाशन, दिल्ली, सन् 1971 ई0।
28. द्रष्टव्य : डॉ0 उमा अष्टवंश, छायावादोत्तर काव्य में बिम्ब–विधान'', पृ0 19, आर्य बुक डिपो, करोल बाग, नई दिल्ली, सन् 1974 ई0।
29. (क) Hegal, "The Philosophy of fine Art", Page 95 Translated by esmasten, G. Bell and sons, London, 1920.
(ख) डॉ0 कुमार विमल, ''छायावाद का सौन्दर्यशास्त्रीय अध्ययन, पृ0 195, पाद–टिप्पणी–21।
30. ''डॉ0 कुमार विमल, ''छायावाद का सौन्दर्यशास्त्रीय अध्ययन, पृ0 185 ।
31. डॉ0 जगदीश गुप्त, ''काव्य–बिम्बः समस्या और स्वरूप'' ''नयी कविता'', (अङ्क= अंक–7; सन् 1963–1964 ई0, पृ0 196, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।

# अपभ्रंश कथाकाव्य का स्वरूप

**डॉ० सुनिल कुमार सिंह***

अपभ्रंश में कथा को 'कहा' कहते हैं। प्राकृत की भाँति अपभ्रंश में भी कथाओं के तीन प्रकार दृष्टिगोचर होते हैं। कुछ कथाएँ प्रबन्ध है, जिनमें महाकाव्य के गुण मिलते हैं और कुछ चरित्र प्रधान है जो प्रबन्ध काव्य की शैली में लिखी गयी है तथा कुछ धार्मिक विवरण मात्र हैं। जैसे स्वयंभू की रामायण चरित काव्य होने पर भी कवि ने उसे राम कथा कहा है।[1] इससे यह सूचित होता है कि अपभ्रंश के कवि चरित और कथा में अन्तर नहीं मानते। आचार्य विश्वनाथ ने आख्यायिका को कथा की भाँति माना है। उसमें कवि वंश आदि का विवरण गद्य में कहा जाता है। वह आश्वासों में निबद्ध होती है।[2] रुद्रट के मत में कथा की भाँति आख्यायिका भी गद्य में लिखी जाती है। अन्तर इतना ही है कि आख्यायिका में कवि का वंश कृत एवं आत्मचरित पद्य में नहीं होता।[3]

कथा प्रबन्ध की मूल वस्तु है। उस में वस्तु–विवरण मुख्य होता है, किन्तु घटनाओं का विस्तार भी महत्त्वपूर्ण नहीं होता। कथा को गतिशील बनाये रखने के लिए काव्य में घटनाओं की योजना तथा अवान्तर कथाएँ भी सम्बद्ध देखी जाती है। इसीलिए सम्भवतः आलंकारिकों ने कथा को अलग से काव्य का भेद नहीं माना। किन्तु इस देश की लगभग सभी भाषाओं में पौराणिक और आधुनिक कथा–साहित्य वर्तमान है। आचार्य भामह ने कथा को इतिहासाश्रय कहा है।[4] इससे यह भी संकेत मिलता है कि पुरावृत्त तथा आख्यान जन–जीवन में शताब्दियों से प्रचलित रहे है। यद्यपि संरचना में तथा रूपों में आश्चर्यजनक परिवर्तन होता रहा है, पर कथा अत्यन्त प्राचीन काल से कही जाती रही है और बाद में भी लिखी जाती रही है और लिखी जाती रहेगी– भले ही प्रकारगत रूपों में भेद बना रहे। क्योंकि वह ऐसी वार्त्ता होती है जिसे कहे बिना मनुष्य अपनी भावनाओं में बँध कर रह नहीं सकता।

गद्य प्रबन्ध के दो भेद कहे गये हैं–आख्यायिका और कथा। दण्डी के अनुसार कथा और आख्यायिका में मौलिक भेद नहीं है।[5] हेमचन्द्र ने कथा और आख्यायिका का भेद नायक के आधार पर किया है। कथा का नायक घोर शान्त और आख्यायिका का ख्यात होता है। कथा सभी भाषाओं में तथा गद्य–पद्य में कही जाती है, पर आख्यायिका केवल संस्कृत में तथा गद्य में।[6] कथा में उच्छ्वासों का

***एम०ए०, पी–एच०डी० प्राकृत एवं जैनशास्त्र विभाग वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा (बिहार)**

विभाग तथा वक्त्र, अपरवक्त्र में निबद्ध होने का संस्कृत में नियम नहीं है।[7] किन्तु प्राकृत, अपभ्रंश में प्रायः कथाएँ सन्धि, परिच्छेद तथा आश्वासों में निबद्ध मिलती है। अधिकतर कथाएँ पद्यबद्ध हैं, पर संस्कृत में गद्य में ही लिखी गयी है। आचार्य आनन्दवर्द्धन के कथन से और भी स्पष्ट हो जाता है कि कथा में विकट बन्ध की प्रचुरता होने पर भी गद्य का रस समन्वित तथा औचित्य पूर्ण होना आवश्यक है।[8] इस प्रकार आचार्य आनन्दवर्द्धन काव्य के सम्बन्ध में रसान्विति की जिस मान्यता को आवश्यक बताते हैं, कथा के सम्बन्ध में भी उसी को दुहराते हैं।

वस्तु रूप में प्रबन्ध और कथाकाव्य में कोई अन्तर नहीं है। यदि कोई भेदक रेखा खींचनी ही पड़े तो वह शैली भेद के अनुसार निर्धारित होगी। संरचना में भी कहीं–कहीं भेद देखा जाता है पर वह बहुत ही सूक्ष्म और सभी रचनाओं में नहीं मिलता। अतएव यह निःसन्देह रूप से कहा जा सकता है कि अपभ्रंश के प्रबन्ध और कथाकाव्य में कोई अन्तर नहीं है। डॉ० भायाणी तो स्वरूप की दृष्टि से पौराणिक और चरितकाव्य में कोई अन्तर नहीं है। डॉ० भायाणी तो स्वरूप की दृष्टि से पौराणिक और चरितकाव्य में बहुत अन्तर नहीं मानते। रचना–प्रकार दोनों में समान होता है। दोनों में सन्धिबद्ध होते हैं। चरितकाव्य में विषय सीमित और सन्धियों की संख्या कम रहती है, पर पौराणिक काव्य में विषय विस्तृत तथा सन्धियों की संख्या पचास से सवा सौ तक होती है।[9] किन्तु दोनों में अन्तर सन्धियों का नहीं है, विषय और शैली का है। उदाहरण के लिए–यशःकीर्ति का पाण्डवपुराण चौंतीस सन्धियों की, हरिवंशपुराण तेरह सन्धियों की तथा श्रुतकर्तिकृत हरिवंशपुराण चवालीस सन्धियों की और बुध विजयसिंह रचित 'अजितपुराण' दस सन्धियों की रचना है। डॉ० शम्भुनाथ सिंह अपभ्रंश के काव्यों को दो प्रकार की शैलियों में लिखे हुए मानते हैं।[10] वस्तुत शैलीभेद स्पष्ट देखा जा सकता है और इसीलिए 'पउमचरिउ', 'हरिवंशपुराण' और 'महापुराण' जिस शैली में और बन्ध–रचना में निबद्ध है वह हमें 'णायकुमारचरिउ' में नहीं दिखाई देती तथा उन से भिन्न 'भविसयत्तकहा' और 'सिद्धचक्ककहा' में दृष्टिगोचर होती है।

यद्यपि अपभ्रंश में कथा और चरित काव्यों की प्रचुरता है, पर साहित्य के अन्य अंगों पर लिखी जाने वाली रचनाओं का संकेत उन में मिलता है। अन्तर दर्शाने के लिए हम चरित और कथांकाव्य में वस्तु–विवरण, आकार तथा शैली–भेद मान सकते है। चरितकाव्य पुरुष विशेष या त्रेसठशलाकापुरुषों के जीवनचरित से सम्बद्ध होते हैं और कथाकाव्य जन सामान्य के जीवन से। महापुराणों से स्पष्ट ही त्रेसठशलाकापुरुषों के समूचे जीवन के साथ ही उनके पूर्व भवों, प्रासंगिक विभिन्न घटनाओं, अवान्तर कथाओं तथा जीवन से सम्बद्ध सभी कार्य–व्यापारों का विवरण अतिशयता के साथ वर्णित मिलता है। किन्तु चरित काव्यों में उद्देश्य विशेष से



नियोजित पौराणिक कथावस्तु पौराणिक या लोकशैली में वर्णित होती है। पुराण–काव्य में साहित्यिक सौष्ठव के दर्शन और सैद्धान्तिक विचारों का समन्वय भी मिलता है। प्राकृत से ही कथाकाव्य प्रबन्ध के रूप में मिलने लगते है। अपभ्रंश के कथाकाव्यों में सन्धिनिर्वाह तथा काव्य रूढ़ियों का पूर्ण औचित्य दिखाई देता है। उपलब्ध सभी कथाकाव्य सन्धियों में विभक्त है। उनमें एक से अधिक रसों का परिपाक है। कथा के विकास में नाटक में प्राप्त होने वाले तत्त्वों की पूर्ण संयोजना देखी जाती है। घटनाओं में भी कार्यकारण योजना समान रूप से व्याप्त है। उनमें धार्मिक प्रभाव वातावरण तथा कथानक से लिपटा रहता है। जिन कथाकाव्यों की वस्तु लोक–जीवन से गृहीत है उनमें विस्मयकारी घटनाओं का योग भी मिलता है।

कथाकाव्य प्रबन्ध का काव्यात्मक भेद है, जिसमें शास्त्रीयता से हट कर काव्य रूप का विकास देखा जा सकता है। उसमें लक्षणग्रन्थकारों द्वारा प्रतिपादित कुछ बातों को छोड़ कर सभी गुणों का पूर्ण समावेश प्राप्त होता है। शैली तथा वर्णन की प्रवृत्ति और शिल्प–संरचना में अन्तर अवश्य है। डॉ० शम्भुनाथ सिंह के मत में कथा–काव्यों की भाँति प्रबन्धकाव्य में लोकोतत्त्वों और कथानक रूढ़ियों की अधिकता नहीं होती है, जिससे उस में कथाकाव्यों की तरह की एकरूपता नहीं होती।[11] इस प्रकार सामान्य रूप से अपभ्रंश में प्रबन्ध और कथाकाव्य में कोई भेद नहीं होता। क्योंकि प्रबन्ध की भाँति, प्रकृति का जीवन का अंग बन जाना, साहित्यिक रूढ़ियों का पालन, अलंकारों का भावों के पीछे चलना, नाटकीय सन्धियों से समन्वित होना, सन्धिबद्ध होना, सन्धि के अन्त में छन्द में परिवर्तन हो जाना, कथा का विकास मनोवैज्ञानिकता के साथ होना तथा ग्राम–नगर, प्रकृति आदि का वर्णन आदि विशेषताएँ कथाकाव्य में भी दिखाई देती है। फिर, डॉ० शम्भुनाथ सिंह ने परम्परागत परिभाषा के अनुसार अपभ्रंश के पुराण, चरित और कथाकाव्य भेदों को निराधार बताया है। पर प्रबन्ध काव्य मानते हैं।[12] किन्तु डॉ० नामवर सिंह कल्पित अथवा लोक–कथा के आधार पर लिखे गये आख्यान–काव्य को कथाकाव्य कहते है।[13] वास्तव में अपभ्रंश में लिये गये कथाकाव्य चरितकाव्यों से भिन्न है, जिन का स्पष्ट अन्तर 'कथाकाव्यनुशीलन' के प्रसंग में विवेचित है।

**संदर्भ ग्रन्थ :–**

1. पउमचरियं – 1/1
2. साहित्य दर्पण – 6, 335, 336
3. काव्यालंकार – 16, 26
4. काव्यालंकार – 1, 9
5. काव्यदर्श– 1, 28

6. काव्यानुशासन – अध्याय 8
7. अभिनवगुप्त : ध्वन्यालोकलोचन, 3, 7
8. ध्वन्यालोक, 3, 8
9. डॉ० हरिवल्लभ भायाणी : पउमसिरीचरिउ की भूमिका, पृ. 15
10. डॉ० शम्भुनाथ सिंह : हिन्दी महाकाव्य स्वरूप–विकास, प्रथम संस्करण, पृ. 173
11. हिन्दी साहित्य कोष, पृ. 478
12. डॉ० शम्भुनाथ सिंह : हिन्दी महाकाव्य स्वरूप–विकास, प्रथम संस्करण, पृ. 174–175
13. डॉ० नामवर सिंह : हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योग, तृतीय परिवर्द्धित संस्करण, पृ. 212

****

# Stress In Modern Life: Adolescents And Their Problems

**Sanjay Kumar***

Adolescence is the twilight zone between childhood and adulthood. It is a transitional period in which peer relationship deepens, autonomy in decision making develops and intellectual pursuit and social belongings are sought. Psychosocial adjustment is a main concern of this phase of development because even normal individuals struggle with issues of identity, autonomy, sexuality, and relationships. Psychosocial disorders are more common during adolescence than during childhood, and many unhealthy behaviors begin during adolescence. According to Kessler et.al 'adolescence period is critical times for developing good mental health.' Sadock & Sadock (2007) also pointed out that 'adolescence is largely a time of exploration and making choices, a gradual process of working towards an integrated concept of self.' But it is also a fact that today adolescence is the most stressful period of life. Some stress situation of adolescence is extension of childhood stress while others are anticipation of the stress of adult life. Parental dominance, lack of adjustment, wish to achieve freedom, unsuccessful attempt to control impulses and emotion etc. are the main causes of these stress. Kobasa (1979) pointed out that 'individual who experienced high levels of stress but remained healthy had a different personality structure than individual who experienced high levels of stress and become ill.'

Stress in childhood and adolescence are also seen in the fact that more than 12% of them have severe mental problems and they require some kind of professional help. Impact of stress on adolescence is also seen in the findings that suicide in the United States is the third

***Research Scholar Department of Psychology Magadh University, Bodh Gaya &**
**Assistant Professor (Department of Psychology) Deoraha Baba Sridhar Das Degree College (J.P University)Rampur, Garkha (Saran)**